International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197, Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 2; March 2017; Page No. 162-163

निरुक्त में भाषा के घटक : नाम और आख्यात

डॉ. सुमन रानी

LECT. Sanskrit, G.S.S.S. Suketri, Panchkula, Haryana, India

प्रस्तावना

लोक व्यवहार के लिए शब्द की सर्वश्रेष्ठ उपाय है, अन्य किसी माध्यम से किया गया लोक व्यवहार निःसंदिग्ध रूप से अर्थ की प्रतीति नहीं करा सकता। चूंकि वेद के लिए है, इसलिए उसमें भी शब्दों के माध्यम से मन्त्र की अभिव्यक्ति हुई है।

मन्त्र और उसके अर्थ को हृदयंगम कराने के लिए प्राचीनतम उपायों में से अनन्यतम उपाय निघण्टु रहा है। स्वयं आचार्य कहते हैं – साक्षात्कृतधर्माण ऋषयो बभूवुः। तेऽवरेभ्योऽसाक्षात्कृतधर्मभ्य उपदेशेन मन्त्रान् सम्प्रादुः। उपदेशाय ग्लायन्तोऽवरे बिल्मग्रहणायेमं ग्रन्थं समाम्नासिषुः। वेदं च वेदाङ्गानि च (निघ. 1.20) प्रारम्भ में धर्मतत्त्व का साक्षात्कार कर चुके ऋषि हुए, उन्होंने परवर्ती धर्म का साक्षात्कार न कर सकने वाले लोगों के लिए उपदेश के माध्यम से मन्त्रों को प्रदान किया। उपदेश ग्रहण कर सकने में असमर्थ परवर्ती पीढ़ी के लिए स्पष्टतापूर्वक समझाने के लिए इस निघण्टुकोष का समाम्नान किया है वेद तथा वेदाङ्गों का भी।

इस प्रकार आचार्य यास्क ने निघण्टु को आधार बनाकर निरुक्त नामक ग्रन्थ का प्रणयन किया, जिसका मूल उद्देश्य मन्त्रार्थ परिज्ञान था।

चतुर्धा शब्दविभाग

यास्क के निरुक्तशास्त्र में चार प्रकार के शब्द पाए जाते हैं–तद्यान्येतानि चत्वारि पदजातानि नामख्याते चोपसर्गनिपाताश्च तानीमानि भवन्ति (निघ. 1.1) नाम, आख्यात, उपसर्ग और निपात।

शब्द के चतुर्धा होने का कारण

प्रश्न उठ सकता है कि पदसमुदाय के चार प्रकार ही क्यों? न्यून वा आधिक क्यों नहीं? जिस प्रकार ऐन्द्रव्याकरण में अर्थ को पद माना गया है।[1] पाणिनि व्याकरण सुबन्त और तिङन्त दो प्रकार के पद मानता है।[2] इसके अतिरिक्त उपसर्ग और निपात को एक करके तीन पद माने जा सकते हैं, या फिर गति और कर्मप्रवचनीय को उपसर्ग निपात से भिन्न मानकर पांच अथवा छः प्रकार का भी पदविभाग माना जा सकता है।[3]

आचार्य दुर्ग ने इन प्रश्नों को उठाकर उनका उत्तर केवल 'न' में दिया है। उपर्युक्त अन्य पद वर्गीकरणों में से किसी एक को यास्क द्वारा न अपनाने का दुर्ग ने स्पष्ट उत्तर नहीं दिया है।

यास्क द्वारा पदचयतुष्टय को मान्यता देने का यह कारण यह प्रतीत होता है कि उस समय यही एक वर्गीकरण प्रमुख रूप से वैय्याकरणों द्वारा मान्यता प्राप्त था। ऋग्वेद प्रातिशाख्य में भी इसी वर्गीकरण के दर्शन होते हैं–'नामाख्यातमुपसर्गो निपातश्चत्वार्याहुः पदजातानि शाब्दाः'[4] शब्दस्वरूपवेत्ता वैय्याकरण नाम, आख्यात, उपसर्ग और निपात इन चार प्रकार की पदजातियों का निरूपण करते हैं। स्वयं यास्क इस तथ्य को स्वीकार करते हैं कि उन्होंने अपने इस पदविभाग का ग्रहण वैय्याकरणों से किया है।[5] इसी प्रकरण में यास्क नैरुक्तों द्वारा मान्य पदविभाग का उल्लेख करते हैं। उनका कहना है कि ऋक्, यजुः, साम और व्यावहारिकी– ये नैरुक्तों के अनुसार चार पद की जातियां हैं।[6] लेकिन यह पदविभ्ज्ञाग शब्दनिष्ठ न होकर, प्राचीन वाङ्मय के विभाजन पर आधारित है। इसलिए यास्क के पास उपर्युक्त पद वर्गीकरण के मानने के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं था। इसके अतिरिक्त नैरुक्त परम्परा से जो पद वर्गीकरण प्राप्त हो रहा था, वह यास्क को अपने शास्त्र को आधार भित्ति हेतु उपयुक्त प्रतीत नहीं हुआ, क्योंकि यास्क का लक्ष्य नामपद का निर्वचन था। तदर्थ उन्हें ऐसे पदवर्गीकरण की आवश्यकता थी कि जो व्युत्पत्तिमूलक हो, अतः यास्क ने निःसंकोच होकर शब्दशास्त्र के मर्मज्ञ वैय्याकरणों से इस (नाम, आख्यात, उपसर्ग, निपात) वर्गीकरण को ग्रहण किया है।

अन्य वर्गीकरणों से यास्क के पदवर्गीकरण की श्रेष्ठता

अब यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि अन्य पदवर्गीकरण उपर्युक्त वर्गीकरण की अपेक्षा हीन क्यों हैं? यास्क की दृष्टि ने अन्य वर्गीकरणों में से किसी एक को क्यों नहीं अपनाया? उपर्युक्त अन्य वर्गीकरणों को न अपनाने में संभवतः निम्न कारण रहे होंगे– जहां तक ऐन्द्र व्याकरण के अर्थ ही पद है,[7] का सम्बन्ध है, इस मत में यह दोष था कि यह एक वर्गीकरण न होकर पद की सामान्य परिभाषा थी। आचार्य पाणिनि ने शास्त्र में यह प्रातिपदिक की परिभाषा है।[8] अतः इसे स्वीकार करने में कोई लाभ नहीं था।

पाणिनि सुबन्त और तिङन्त दो प्रकार का पद–विभाग स्वीकार करते हैं।[9] परन्तु यास्क के समय यह पद वर्गीकरण उपलब्ध नहीं था, अतः उक्त वर्गीकरण के लाभ–हानि की ओर यास्क की दृष्टि न जा पाना स्वाभाविक है, परन्तु पाणिनि व्याकरण का कार्य भी उक्त दो प्रकार के पदों से चल नहीं पाया है, उन्हें अव्यय नाम के एक तृतीय भेद को स्वीकार करने के लिए बाध्य होना पड़ा है,[10] जो एकरूप रहने के कारण सुबन्त और तिङन्त के बन्धनों से मुक्त है।[11] इसी प्रकार पाणिनि गति, कर्मप्रवचनीय आदि भेदों को मान्यता देने के लिए भी विवश हुए हैं।[12] इस प्रकार पाणिनि के मत में स्थूल रूप से पदसमुदाय भले ही दो प्रकार है पर उन्हें चार से भी अधिक पद प्रकार स्वीकार करने पड़े हैं।

उपसर्ग–निपात के गति, कर्मप्रवचनीय आदि भ्ज्ञेद मानकर पद को पांच या छः प्रकार का न मानने का संभवतः, यह कारण रहा है कि पाणिनि ने उपसर्ग तथा निपात को विशिष्ट संदर्भ में गति तथा कर्मप्रवचनीय नाम दिया है।[13]

त्रिधा पदविभाग की अस्वीकार्यता

जो लोग उपसर्ग और निपात को एक करके त्रिधा पदविभाग मानने के पक्ष में हैं, यास्क द्वारा उसको स्वीकृति प्रदान न करने का यह कारण प्रतीत होता है कि उपसर्ग और निपात इन दोनों के प्रयोग तथा अर्थ गौरव में भेद है। उपसर्ग का

प्रायः नाम और आख्यात के आदि में प्रयोग होता है, जबकि निपात इस बंधन से सर्वथा मुक्त है। इसी प्रकार उपसर्ग स्थान–स्थान पर विभिनन अर्थों की सृष्टि करता है, जबकि निपात उक्त विशेषता से सर्वथा रहित है। संभवतः इसी कारण यास्क इन दोनों को एक मानने को तैयार नहीं है।

रूपात्मकता (प्रकृति) के आधार पर उपसर्ग और निपात को एक माना जा सकता है, परन्तु यह प्रस्ताव एक सीमा तक स्वीकरणीय है और वेद के संदर्भ में यह लागू नहीं हो सकता है।[14] इसके अतिरिक्त यास्क उपसर्ग–निपात के मध्य ऐसा कोई भेद बोधक लक्षण नहीं दे पाए हैं, जैसा कि उन्होंने नामाख्यात के विषय में दिया है। अतः उपसर्ग और निपात को रूपात्मकता की दृष्टि से एक माना जा सकता है।

संदर्भ :

1. दुर्ग, निरुक्तवृत्ति, पृ. 10 'अर्थः पदमैन्द्राणाम्'
2. अष्टा., 1.4.14 'सुप्तिङन्तं पदम्'
3. दुर्ग, निरुक्तवृत्ति, पृ. 10, वाक्य. 3.1 'क्रिया कैश्चित् पदं भिन्नं चतुर्धा पंचधापि वा'
4. ऋग्वेदप्रातिशाख्य, 12.17, पृ. 672 'नामाख्याते चोपसर्गनिपातश्चेति वैय्याकरणाः'
5. निरु. 13.9
6. निरु. 13.9 'ऋचः यजूँषि सामानि चतुर्थी व्यावहारिकीति नैरुक्ताः'
7. दुर्ग, निरुक्तवृत्ति, पृ. 10 'अर्थः पदमैन्द्राणाम्'
8. अष्टा., 1.2.45, 'अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्'
9. अष्टा., 1.4.14
10. अष्टा., 1.2.37 'स्वरादीनि निपातमव्ययम्'
11. गो.ब्रा., 1.1.26 काशिका, अष्टा., 1.1.37, 'सदृशं त्रिषु लिङ्गेषु सर्वासु च विभक्तिषु। वचनेषु च सर्वेषु यन्न व्येति तदव्ययम्'।
12. अष्टा., 1.4.60, 83
13. वही
14. द्रष्टव्य उपसर्गनिपातप्रकरण